स्वदेशी पत्रिका

वर्ष–20, अंक–2, माघ–फाल्गुन 2068, फरवरी 2012

संपादक
विक्रम उपाध्याय

कार्यालय
धर्मक्षेत्र, सेक्टर–8, बाबू गेनू मार्ग
रामकृष्णपुरम, नयी
दिल्ली–110022
से प्रकाशित
दूरभाष : 011–26184595
स्वदेशी जागरण समिति की ओर से ईश्वर दास महाजन द्वारा कॉम्पीटेंट बाइन्डर्स (प्रिंटिंग यूनिट), नवीन शाहदरा, दिल्ली–32 से मुद्रित।

आवरण कथा-4

केंद्र सरकार लुभावने नारों के लिए मनरेगा और खाद्य सुरक्षा विधेयक की रट भले ही लगा रही हो, पर ग्रामीण क्षेत्र की भारी समस्या है। यह ऐसा समय है, जहां सरकार कई प्रकार की मजबूरियां गिनाकर विदेशी कंपनियों को उन क्षेत्रों में आने की इजाजत दे सकती है.

अनुक्रम

आवरण लेख

दोराहे पर खड़ा देश
बजट कितना पार लगाएगा बेड़ा
– विक्रम उपाध्याय /4

स्वदेशी संवाद

किसान विरोधी है : खुदरा में विदेशी निवेश
– डॉ. अश्विनी महाजन /7

जैव विविधता

बीज में छिपी है खाद्य संप्रभुता
– वंदना शिवा /10

कुपोषण

कुपोषण के मूल कारण
– देविन्दर शर्मा /12

अर्थव्यवस्था

आम आदमी बनाम उद्यमी
– डॉ. भरत झुनझुनवाला /15

समीक्षा

विकल्पों के लिए व्यापक आंदोलन
– भरत डोगरा /18

मुद्दा : नौकरशाही को कैसे सुधारे..?
– डॉ. वेद प्रताप वैदिक /21

विचार–विमर्श

भ्रष्टाचार, कालाधन और यारांना पूंजीवाद
– कमल नयन काबरा /23

पर्यावरण : शहर के पानी की बदबूदार कहानी
– सुनीता नारायण /26

चिंतन : धर्म राजनीति का गांधी दर्शन
– जगमोहन /29

प्रतिक्रिया : विकृत सेक्यूलरवाद
– बलवीर पुंज /31

स्वास्थ्य : सफलता की राह में कई रोड़े भी
– निरंकार सिंह /33

अभियान :

गंगा के संरक्षण पर और कितने बलिदान
– अरुण तिवारी /35

पाठकनामा/2, रपट/35, आंदोलन/36

पाठकनामा

किसान शक्तिशाली होंगे, तभी भारत शक्तिशाली होगा

भारत कृषि प्रधान देश है। यहाँ की 70 प्रतिशत आबादी गाँव में रहती है और खेती इनका प्रमुख व्यवसाय है। पर आज देश में किसानों की स्थिति दयनीय है। साल दर साल हजारों किसान बढ़ते कर्ज का बोझ वहन नहीं कर पाते और खुद को मार डालते हैं। चाहे यह फसल की विफलता हो, लागत में वृद्धि, बिचौलियों के हाथों शोषण हो, सबकी कहानी समान है। छोटे और सीमांत किसान कृषि से पलायन कर भूमिहीन मजदूर के रूप में काम कर रहे हैं। भारतीय कृषि भयावह संकट से गुजर रही है, किंतु इस पर सरकार जरा भी ध्यान नहीं दे रही है।

राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो के अनुसार केवल एक वर्ष में ही 15,964 किसान आत्महत्या कर चुके हैं। आंध्र प्रदेश में भी 90 किसान अपनी जान गंवा बैठे है। अतः किसानों को उचित मूल्य मिले ताकि वह कृषि में लगी लागत से कहीं ज्यादा आय प्राप्त कर सकें। सरकार और समाज को किसान देवता की पूरी चिंता और सुरक्षा करनी होगी, तभी भारत शक्तिशाली देश बनेगा।

– राजेन्द्र सिंह ठाकुर, ग्वालियर

गरीब भारत को एकजुट होना होगा

आज देश में अमीरी और गरीबी की खाई में काफी अंतर आ गया है। अमीर पहले से ओर ज्यादा अमीर होते जा रहे है और गरीब पहले से ज्यादा गरीब होते जा रहे हैं। अगर हम दूसरे शब्दों में कहे कि एक अमीर भारत और एक गरीब भारत तो शायद किसी को ऐतराज नहीं होगा। अमीर भारत में पैसे, शान और शौकत, हवाई जहाज व गाड़ियों की कमी नहीं है। अमीर भारत वालों के पैसे स्विस बैंक में जमा होते हैं। पूंजीपतियों की विदेशों में कोठियां बन रही हैं। ये पूंजीपति लोग विदेशों में यह दिखा रहे हैं कि भारत किसी से कम नहीं है लेकिन वास्तविक स्थिति में यही पूंजीपति लोग भारत में गरीबों का शोषण ही करते हैं। जब विश्व के भ्रष्टाचार का आंकड़ा आया तो आंकड़े में पाया गया कि भारत भ्रष्टाचार में पहला स्थान रखता है। आज भारत के प्रत्येक सरकारी कर्मचारी से लेकर मंत्री तक भ्रष्टचार में लिप्त है। फोर्ब्स पत्रिका की दस अमीरों की लिस्ट में चार भारतीय प्रत्येक वर्ष होते है। क्या ये भारतीय कभी अपने गरीब भाईयों पर नज़र डालते हैं। इनका काला धन स्विस बैंक में पड़ा है लेकिन सरकार है कि इनके काले धन को देश में लाने को तैयार नहीं। अब तो गरीब भारत को एकजुट होना पड़ेगा तभी भारत में एक नयी क्रांति का जन्म होगा।

– मुकेश कुनियाल, सैक्टर–3, आर.के. पुरम् नई दिल्ली

आवश्यक नहीं कि इस अंक के भीतर प्रस्तुत लेखकों के विचार स्वदेशी पत्रिका के संपादक मंडल के विचारों से मेल खाते हों। पाठकों की जानकारी के लिए उन्हें यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

संपादकीय कार्यालय

"धर्मक्षेत्र" शिव शक्ति मन्दिर, सैक्टर–8, रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–110022
दूरभाष : 011–26184595 • ई–मेल : swadeshipatrika@rediffmail.com

अगर आप घर बैठे स्वदेशी पत्रिका चाहते हैं तो डिमांड ड्राफ्ट, मनीऑर्डर अथवा चेक द्वारा शुल्क *'स्वदेशी पत्रिका'* दिल्ली के नाम भेजने का कष्ट करें।

वार्षिक सदस्यता शुल्क : 100 रुपए
आजीवन सदस्यता शुल्क: 1,000 रुपए

यदि शुल्क भेजने के उपरांत भी आपको पत्रिका समय पर उपलब्ध नहीं हो पा रही है तो तुरंत पत्रिका कार्यालय को सूचित करें।

(ध्यानार्थ : कृपया अपना नाम व पता साफ अक्षरों में लिखें)

उन्होंने कहा

राहुल गांधी काले धन पर जवाब क्यों नहीं देते है। वे विकास की बात करते हैं लेकिन इसके लिए पैसा कहां से आएगा।

– रामदेव बाबा

2–जी देश को डुबा देने वाला घोटाला है जिसने पूरे देश को लूटा है। इस पर आया सुप्रीम कोर्ट का फैसला ऐतिहासिक है जिसने सरकार को बेनकाब किया।

– उमा भारती

मैं भारत के उच्चतम न्यायालय पर गर्व करता हूं। जिसने कंपनियों के 122 लाइसेंस रद करने के लिए बहुत हिम्मत दिखाई। शाबाश स्वामी!

– चेतन भगत, लेखक

औद्योगिक उत्पादन सूचकांक यानी आइआइपी को बदलना होगा। इसमें तेजी से बढ़ रहे उद्योगों की तुलना में धीमी गति वाले उद्योगों का वजन अधिक है।

– आदि गोदरेज

भारत में अवैध रूप से रह रहे बांग्लादेशी न केवल यहां पर गंजे से जीवन व्यतीत कर रहे हैं, बल्कि भारतीय नागरिकों के अधिकारों और सरकारी सुविधाओं का भी भरपूर मात्रा में दोहन कर रहे हैं।

– अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश कामिनी लॉ

अगर प्रधानमंत्री वास्तव में कुपोषण से शर्मिंदा हैं तो उन्हें आर्थिक नीतियों में बदलाव कर इन्हें जनवादी और पर्यावरण अनुकूल बनाना होगा।

– देविन्दर शर्मा

संपादकीय

इन चुनावों में कुछ मौलिक मुद्दे तो उठे

चुनाव पर्व सामने है। विभिन्न राजनीतिक दलों के बीच जोर आजमाइश तेज है। मुद्दे छाटे जा रहे हैं। चुनाव रणनीतिकार समीकरणों को समझने, बनाने और बिगाड़ने में लगे हैं। इन सब के बीच एक सवाल सभी सजग लोगों के मन में उठता है, कि क्या विधानसभा के चुनाव वैसे ही होते आएंगे या फिर राजनीतिक दिशा को बदलने की कोई पहल होगी। ज्यादा नहीं कम से कम पंजाब और उत्तरप्रदेश के विधानसभा चुनाव में यह सवाल समिचीन तो है ही। पिछले दो तीन वर्ष में देश का राजनीतिक माहौल ज्यादा दूषित हुआ है। घोटालों में इक्के दुक्के नेताओं और मंत्रियों की संलिप्तता नहीं है, बल्कि उसकी डोर कुछ खास राजनीतिक पार्टियों के शीर्ष नेतृत्व तक गई है। यह मामूली बात नहीं। देश की अर्थव्यवस्था पर इसका बहुत ही गंभीर परिणाम हुआ है। उत्तरप्रदेश की बानगी देखिए, पूरे पांच साल के शासन में बसपा ने सिवाय भूमि बेचने के कोई आर्थिक उपलब्धि हासिल नहीं की। न कोई औद्योगिक नीति बनाई न कोई निवेश नीति। प्रदेश के लोग रोजगार के लिए पहले की तरह ही दिल्ली–मुंबई भागते रहे। दरअसल देश में आर्थिक नीतियां इतनी लचर स्थिति में पहुंच गई हैं, कि कहीं किसी उद्यमी में कोई उत्साह संचार ही नहीं है। घोटालों और लूट के लिए यह पूरा दशक जाना जाएगा। कांग्रेस इसका कितना श्रेय लेना चाहेगी। शायद बिल्कुल नहीं। कांग्रेस के पास कहने को कुछ भी नहीं और विपक्ष के पास पूछने का साहस नहीं। कांग्रेस ने अपनी यूपीए सरकार का पहला पांच वर्ष आम आदमी के नारे में निकाल दिया और अपनी दूसरी पारी मनरेगा को जपने में निकाल रही है। क्या इन विधानसभा चुनावों में यह पूछा नहीं जाना चाहिए कि सामाजिक क्षेत्र के लिए लाखों करोड़ रुपये सालाना का प्रावधान करने वाली सरकार आर्थिक क्षेत्र के लिए क्या किया है। देश का निर्माण उद्योग नकारात्मक विकास की तरफ है। निर्यातक मायूस है। छोटे उद्योगों की हालत पहले से ज्यादा दयनीय है और बेरोजगारों को कोई पूछने वाला नहीं है। हां कुछ खास व्यापारिक घरानों और व्यक्तिगत फायदे के लिए सरकार ने कुछ जरूर किया, जिसकी कोख से टूजी घोटाला निकला। लेकिन अफसोस अभी तक कांग्रेस को कठघरे में खड़ा करने के लिए नैतिक बल की झलक दिखाई नहीं पड़ रही है। उलटे अब कांग्रेस भ्रष्टाचार बाकी दलों पर हमले कर रही है। कांग्रेस के एक महासचिव जब यह जुमला कसते हैं कि केंद्र से भेजा जाने वाला पैसा लखनऊ में बैठा जादू हाथी खा जाता है तो लोग ताली बजाते हैं। वहीं महासचिव जब यह कहते हैं कि भ्रष्टाचार में लिप्त यूपी का एक मंत्री किसी पार्टी को खरीद लिया तो भी सब लोग खामोश रहते हैं। भ्रष्टाचार के मुद्दे पर चुनावी दंगल में उतरे सारे पहलवान एक दूसरे पर सिर्फ कीचड़ उछाल रहे हैं। हमले से ज्यादा अपनी बचाव में लगे हैं। जबकि नारे और मुद्दे गढ़ने की आवश्यकता नहीं है। देश का हर आदमी जानता है कि लगभग आठ वर्ष के शासन काल में कांग्रेस ने क्या दिया!! क्या लोगों को यह बताने की जरूरत नहीं है कि इसी कांग्रेस की सरकार ने पिछले पांच साल में महंगाई इतनी बढ़ा दी कि लोगों के लिए जीना मुश्किल हो गया। क्या लोग यह नहीं समझेंगे कि कभी चीनी तो कभी दूध की कृत्रिम किल्लत पैदा कर कांग्रेस ने जमाखोरों को माला माल कर दिया। क्या कांग्रेस के बारे में किसी को यह याद दिलाना मुश्किल होगा कि विभिन्न एजेंसियों और मीडिया द्वारा गड़बड़ी की सूचना दिए जाने के बावजूद प्रधानमंत्री और कांग्रेस अध्यक्ष ने घोटाले होने दिए। क्या किसी को यह समझाना पड़ेगा कि काला धन को प्रोत्साहित करने में कांग्रेस सबसे आगे है। क्या यह मुद्दा नहीं बन सकता कि कांग्रेस विदेशी ताकतों के आगे झुक कर खुदरा व्यापार में बड़ी–बड़ी बहुराष्ट्रीय कंपिनयों को घुसाकर छोटे–छाटे घरेलू व्यापारियों का निवाला छिनने की तैयारी कर रही है। क्या जनता यह नहीं समझती कि किसानों और मजदूरों के लिए कांग्रेस की झोली में मायूसी के अलावा कुछ नहीं। क्या विदर्भ के किसानों की आत्महत्या कांग्रेस की अनर्थनीति का उदाहरण नहीं बन सकता। पर शायद महत्व मुद्दों को नहीं समीकरणों को दिया जाता है। चुनाव येन केन प्रकारेण जीतने की रणनीति को ज्यादा तवज्जों दी जाती है। जातीय समीकरण और क्षेत्रीय जरूरतों के आगे नीतियों पर अड़े रहना व्यावहारिक नहीं लगता इसीलिए पूरे पांच साल तक जिन मुद्दों पर संघर्ष किया जाता है, उन्हें चुनाव के मौके पर बहुत जरूरी नहीं माना जाता। यदि ऐसा नहीं होता तो इस बार के विधानसभा चुनाव कुछ ठोस मुद्दों पर लड़ा जाना चाहिए था। भूमि अधिग्रहण कानून कुछ दिन पहले तक बहस का बहुत बड़ा मुद्दा था चुनाव आते ही गायब हो गया। खुदरा व्यापार में विदेशी निवेश को लेकर आंदोलन हुआ चुनाव में अभी तक इस मुद्दे पर खामोशी है। पानी, और बिजली जैसे बुनियादी जरूरत के मुद्दे किसी को भी प्रभावित नहीं करते। यही फर्क है, सिद्धांत की लड़ाई और व्यवहार की राजनीति में।

दोराहे पर देश

बजट कितना पार लगाएगा बेड़ा

बजट आने वाला है। वैसे तो कांग्रेस से पूरी जनता निराश ही रही है। अपने आठ साल के कार्य काल में आर्थिक मर्मज्ञ प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने लोगों को राहत कम कष्ट ज्यादा दिए हैं, फिर भी यह माना जा रहा है कि वर्ष 2012–13 का बजट देश और कांग्रेस के लिए काफी मायने रखता है। देश इस समय नीति के मामले में दोराहे पर खड़ा है। एक तरफ आर्थिक परेशानियां मुंह बाएं खड़ी हैं। मंदी की चपेट में अर्थव्यवस्था आ चुकी है। 2007–08 के बाद पहली बार ऐसा हो रहा है कि सकल घरेलू उत्पाद यानी जीडीपी सात फीसदी के नीचे रहने वाली है। कृषि विकास दर गिरकर 2.7 फीसदी आ चुकी है तो विनिर्माण क्षेत्र भी चार फीसदी से नीचे लुढक गया है . . .

सरकार कई प्रकार की मजबूरियां गिनाकर विदेशी कंपनियों को उन क्षेत्रों में आने की इजाजत दे सकती है, जहां घरेलू दबाव के कारण अभी तक विदेशी कंपनियों को प्रवेश की इजाजत नहीं है। उनमें सबसे ऊपर है खुदरा व्यापार के क्षेत्र में विदेशी निवेश को मंजूरी देना। चूंकि यह बजट पांच राज्यों के विधानसभा चुनाव के बाद आने की संभावना है, इसलिए जोखिम मोलकर भी मनमोहन सिंह की सरकार विदेशी आकाओं को खुश करने का प्रयास कर सकती है।

■ विक्रम उपाध्याय

बजट आने वाला है। वैसे तो कांग्रेस से पूरी जनता निराश ही रही है। अपने आठ साल के कार्य काल में आर्थिक मर्मज्ञ प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने लोगों को राहत कम कष्ट ज्यादा दिए हैं, फिर भी यह माना जा रहा है कि वर्ष 2012–13 का बजट देश और कांग्रेस के लिए काफी मायने रखता है। देश इस समय नीति के मामले में दोराहे पर खड़ा है। एक तरफ आर्थिक परेशानियां मुंह बाएं खड़ी हैं। मंदी की चपेट में अर्थव्यवस्था आ चुकी है।

2007–08 के बाद पहली बार ऐसा हो रहा है कि सकल घरेलू उत्पाद यानी जीडीपी सात फीसदी के नीचे रहने वाली है। कृषि विकास दर गिरकर 2.7 फीसदी आ चुकी है तो विनिर्माण क्षेत्र भी चार फीसदी से नीचे लुढक गया है। निर्माण उद्योग की वृद्धि दर भी चार फीसदी से थोड़ी ऊपर है। पर खनन क्षेत्र में नकारात्मक वृद्धि है।

केंद्र सरकार लुभावने नारों के लिए मनरेगा और खाद्य सुरक्षा विधेयक की रट भले ही लगा रही हो, पर ग्रामीण क्षेत्र की भारी समस्या है। यह ऐसा समय है, जहां सरकार कई प्रकार की मजबूरियां गिनाकर विदेशी कंपनियों को उन क्षेत्रों में आने की इजाजत दे सकती है, जहां घरेलू दबाव के कारण अभी तक विदेशी कंपनियों को प्रवेश की इजाजत नहीं है।

उनमें सबसे ऊपर है खुदरा व्यापार

के क्षेत्र में विदेशी निवेश को मंजूरी देना। चूंकि यह बजट पांच राज्यों के विधानसभा चुनाव के बाद आने की संभावना है, इसलिए जोखिम मोलकर भी मनमोहन सिंह की सरकार विदेशी आकाओं को खुश करने का प्रयास कर सकती है।

कांग्रेस के लिए भी यह बजट बहुत मायने रखता है। चूंकि लोकसभा का चुनाव 2014 में होना है, इस लिहाज से कांग्रेस के पास आखिरी मौका है कि वह देश की अर्थव्यवस्था को सुधारने के लिए कोई ठोस कदम उठाए। क्योंकि अगला बजट विशुद्ध रूप से चुनावी बजट होगा।

इस बात की पूरी संभावना है कि कांग्रेस आम आदमी के हित के खिलाफ जाकर भी कुछ नये उपाय करे। कांग्रेस के सामने सबसे बड़ी चुनौती अपने ही घर को ठीक रखने की है। यह साफ हो गया है कि आम चुनाव से ठीक पहले कांग्रेस के कई सहयोगी पार्टिया छोड़ कर जाने वाली है। तृणमूल कांग्रेस और शरद पवार की पार्टी अभी से ही कांग्रेस विरोधी आवाज उठाने लगी हैं।

इसलिए यह बजट कांग्रेस के नेतृत्व के लिए काफी महत्वपूर्ण होगा। कांग्रेस के लिए दोहरी चुनौती इस बात की होगी कि किस तरह बढ़ते घाटे पर अंकुश लगाते हुए मंदी से बचने के लिए सार्वजनिक निवेश बढ़ाए। धरातल पर कांग्रेस के लिए बहुत कठिनाई है। क्योंकि चालू वर्ष में राजस्व उगाही लक्ष्य से कम और खर्च आकलन से ज्यादा।

हाल ही में जारी आकड़ों के अनुसार

वर्ष 2011 में घाटे के अनुमान से वास्तविक घाटा 163.8 फीसदी हो गई है। यानी घाटा डेढ गुना ज्यादा हो चुका है। कर उगाही कम हुई है। सब्सिडी का बोझ ज्यादा बढ़ा है। पूरे साल शेयर बाजार में अनिश्चितता बनी रही जिसके कारण सरकारी कंपनियों के शेयर बेचकर 40 हजार करोड़ रुपये जुटाने का लक्ष्य धरा का धरा रह गया है।

कर उगाही में कमी का मुख्य कारण भी लोग सरकार को ही मान रहे हैं। महंगाई कम करने की कवायद में इस सरकार ने उद्योग धंधों को दाव पर लगा दिया। लगातार बैंक दर में वृद्धि और तरलता में कमी का परिणाम यह आया कि भारतीय उद्योग धंधे अपने आप ही संकुचित होते चले गए।

सरकार द्वारा जारी आकड़े के अनुसार 2011–12 के लक्ष्य के मुकाबले सिर्फ 63.3 फीसदी ही कर राजस्व प्राप्त हुआ। जबकि पिछले साल यानी 2010–11 में कर उगाही लक्ष्य को 74 फीसदी पूरा कर लिया गया था। सरकार का यह लक्ष्य कि वित्तीय घाटा पांच फीसदी से नीचे रखेंगे, पूरी तरह फेल हो गया है। अनुमान है कि चालू वित वर्ष का वित्तीय घाटा

कांग्रेस ने खेत की उपज बढ़ाने और किसानों को उचित मूल्य दिलाने की नीति पर काम करने के बजाय सस्ती लोकप्रियता के हथकंडे अपनाए हैं। मनरेगा में लूट और किसानों की दयनीय हालत दोनों बताती हैं कि कांग्रेस की सोंच खेती और किसानों को लेकर सही नहीं है। आम शहरी कांग्रेस राज से कुपित है। उसकी कमाई भांप की तरह उड़ जा रही है। बेलगाम महंगाई ने उसे कहीं नहीं छोड़ा है। उस पर से मंदी का आलम यह है कि नौकरियां मुश्किल से मिल रही हैं। उसके लिए इस बजट से एक ही अपेक्षा है कि उसकी कमाई पर देय कर का बोझ कुछ कम हो जाए।

लगभग छह फीसदी हो सकता है।

कांग्रेस के सामने सबसे बड़ा सवाल यह है कि वह आखिर इस स्थिति से उबरे कैसे। उसके पास खाद्य और पेट्रोलियम पदार्थों पर दी जा रही सब्सिडी को समाप्त करने या कम करने का विकल्प बहुत ही सीमित है। हालांकि कांग्रेस का एक वर्ग इस बात का प्रयास कर रहा है कि डीजल और रसोई गैस को भी बाजार के हवाले कर दिया जाए। जिस तरह पेट्रोल के दाम बाजार पर आधारित कर दिया गया है उसी तरह डीजल के मूल्य को भी नियंत्रण मुक्त कर दिया जाए।

रसोई गैस में भारी वृद्धि से पूरा मध्यवर्ग कांग्रेस के खिलाफ हो जाएगा तो डीजल को बाजार के हवाले करने का मतलब होगा राजनीतिक उबाल। पर प्रणव मुखर्जी इस बार ज्यादा दृढ़ लगते हैं। उन्होंने हाल ही में कहा था – जितनी सब्सिडी हम दे रहे हैं, जब उसका आकलन मैं करता हूँ, तो मुझे रातों की नींद नहीं आती।'

पर चुनाव के ठीक पहले कांग्रेस के लिए ऐसा करना संभव नहीं होगा। रसोई गैस में भारी वृद्धि से पूरा मध्यवर्ग कांग्रेस के खिलाफ हो जाएगा तो डीजल को बाजार के हवाले करने का मतलब होगा राजनीतिक उबाल। पर प्रणव मुखर्जी इस बार ज्यादा दृढ़ लगते हैं।

उन्होंने हाल ही में कहा था – जितनी सब्सिडी हम दे रहे हैं, जब उसका आकलन मैं करता हूँ, तो मुझे रातों की नींद नहीं आती।' लगता है कि इस बार कांग्रेस आम आदमी की चैन छिनने का प्रावधान करने वाली है।

कांग्रेस के लिए देश को मौजूदा आर्थिक संकट से बाहर निकालने और सभी की अपेक्षाएं पूरा करने में आंधी आ जाएगी। मंदी से निकलने के लिए एक तरफ भारी निवेश की जरूरत बताई जा रही है तो दूसरी तरफ घाटा कम करने और सब्सिडी घटाए जाने की जरूरत पर बल दिया जा रहा है।

ग्रामीण भारत त्राहि–त्राहि कर रहा है। उसे कांग्रेस सरकार में दोहरी मार लगी है। एक तरफ उसकी उपज का कोई उचित खरीददार नहीं मिल रहा है दूसरी तरफ महंगाई के कारण खेती करना लगभग असंभव होता जा रहा है। खाद और बीजों का वितरण लगभग निजी क्षेत्र के हाथों में आ गया है, किसानों को सीधा लाभ मिलने की कोई संभावना नहीं बची है। उसे सरकार से कहीं भी कोई आस है तो उसकी किसान क्रेडिट कार्ड की सीमा बढ़ाना और कृषि उपज की सही मूल्य पर खरीददारी रह गई है।

कांग्रेस ने खेत की उपज बढ़ाने और किसानों को उचित मूल्य दिलाने की नीति पर काम करने के बजाय सस्ती लोकप्रियता के हथकंडे अपनाए हैं। मनरेगा में लूट और किसानों की दयनीय हालत दोनों बताती है कि कांग्रेस की सोच खेती और किसानों को लेकर सही नहीं है।

आम शहरी कांग्रेस राज से कुपित है। उसकी कमाई भाप की तरह उड़ जा रही है। बेलगाम महंगाई ने उसे कहीं नहीं छोड़ा है। उस पर से मंदी का आलम यह है कि नौकरियां मुश्किल से मिल रही हैं। उसके लिए इस बजट से एक ही अपेक्षा है कि उसकी कमाई पर देय कर का बोझ कुछ कम हो जाए।

यानी तीन लाख तक की कमाई कर मुक्त हो जाए। अपेक्षा भारतीय उद्योग को भी बहुत है। हाल ही में वित्तमंत्री के साथ बजट पूर्व चर्चा से निकलकर भारतीय कॉरपोरेट के महारथियों ने एक सुर में कहा – हम नहीं चाहते कि इस बार कॉरपोरेट कर में कोई बढ़ोतरी हो। पर यहां भी इन्हें निराशा लग सकती है।

वित्तमंत्री ने भी उतनी ही कठोरता से कहा – कॉरपोरेट घरानों को ज्यादा कर देने के लिए तैयार हो जाना चाहिए। माना यह भी जा रहा है कि कांग्रेस सामाजिक सरोकार के लिए निजी कंपनियों पर कुछ दायित्व का बोझ डाल सकती है। ❑

किसान विरोधी है : खुदरा में विदेशी निवेश

अंतर्राष्ट्रीय अनुभव बताता है कि इन बहुराष्ट्रीय विशालकाय कंपनियों के चलते गुणवत्ता और मानकों के नाम पर किसानों को भारी नुकसान पहुंचता है। संयुक्त राष्ट्र के खाद्य एवं कृषि संगठन के अनुसार गुणवत्ता, मानकों और इन कंपनियों की विपणन नीतियों के कारण किसानों को भारी नुकसान पहुंचता है। इसलिये इन कंपनियों द्वारा भंडारण और शीतगृह बनाना देश के किसानों तथा उपभोक्ताओं के हित के लिये नहीं है।

■ डॉ. अश्विनी महाजन

खुदरा में विदेशी निवेश पर बहस का रूख मोड़ते हुये सरकार यह दावा कर रही है कि इससे किसानों को बहुत लाभ होगा और खेती का विकास करने में इससे मदद मिलेगी। सरकार का यह तर्क किसी शोध या सर्वेक्षण पर आधारित नहीं है। वास्तव में सरकार ने तर्क खुदरा में प्रवेश को आतुर विदेशी कंपनियों के विज्ञापनों, अमेरीकी सरकार के प्रतिनिधि तथा अन्य वर्गों से ही उधार लिया हुआ है।

स्वभाविक ही है कि खुदरा में विदेशी निवेश से लाभान्वित होने को आतुर बहुराष्ट्रीय कंपनियां तो अपने पक्ष में तर्क देंगी ही कि उनके कारण देश को तरह–तरह के लाभ होंगे। दुर्भाग्यपूर्ण तो यह है कि सरकार जो देश के किसानों, उपभोक्ताओं, उत्पादकों सहित सभी वर्गों के हित संरक्षण के लिये जिम्मेदार है, भी उन तर्कों को मान कर उन्हें आगे बढ़ाने का काम कर रही है।

भारती–वालमार्ट कंपनी के विज्ञापन में कंपनी दावा करती है कि किसान को जो कीमत मंडी से मिलती है, उससे 7 से 10 प्रतिशत ज्यादा कीमत वे किसान को दे रहे हैं। कंपनी दावा करती है कि कंपनी से मिलने वाली मदद से किसान अपने उत्पादों की गुणवत्ता में सुधार करते हुये ज्यादा आमदनी प्राप्त कर सकते हैं।

अमेरीकी सरकार के प्रतिनिधि भी इसी प्रकार के तर्कों द्वारा सरकार को समझाने का प्रयास कर रहे हैं कि खुदरा में विदेशी कंपनियों के आने से किसानों को बहुत लाभ होगा।

उनका कहना है कि खुदरा में विदेशी निवेश से उपभोक्ताओं को तो कम कीमत का लाभ मिलेगा ही, बल्कि किसानों के लिए भी अच्छा है क्योंकि उनके उत्पादों के लिये एक स्थिर बाजार ये कंपनियां

दुर्भाग्यपूर्ण है कि आजादी के 64 वर्ष बाद भी हमारी सरकार समुचित भंडारण की व्यवस्था उपलब्ध नहीं करवा पाई है और उसके लिये भी विदेशी निवेश पर निर्भरता दिखा रही है। योजना आयोग ने स्वयं माना है कि देश में भंडारण और कोल्ड स्टोरेज की व्यवस्था के लिये मात्र 7,687 करोड़ रूपये के निवेश की जरूरत है। केन्द्र सरकार के 12 लाख 57 हजार करोड़ रूपये के सालाना बजट के मद्देनजर यह इतनी बड़ी राशि नहीं है, जो जुटाई न जा सके और उसके लिये करोड़ों लोगों के रोजगार को दांव पर लगा दिया जाये।

देंगी।

लेकिन इन (उधार लिये हुये) सरकारी तर्कों की, अन्य देशों जहां ये बहुराष्ट्रीय खुदरा कंपनियां काम कर रही हैं, के अनुभवों के मद्देनजर जांच करने की जरूरत है। आंकड़े बयान करते हैं कि अमेरिका में खाद्य पदार्थों पर कुल उपभोक्ता खर्च वर्ष 2000 में 833 अरब डालर से बढ़कर 2009 में 1200 अरब डालर तक पहुंच गया (यानि 70 अरब डालर की वृद्धि)।

दूसरी ओर यदि खाद्य पदार्थों के विक्रय से कृषि आमदनी की बात करें तो यह इस दौरान 197.6 अरब डालर से मात्र 282 अरब डालर तक ही पहुंच पाई। इससे स्पष्ट है कि खुदरा में संलग्न कंपनियां किसानों को अधिक से अधिक निचोड़ने का काम करती हैं।

अमेरीकी सरकार के कृषि विभाग के अनुसार वर्ष 2000 से 2009 के बीच खाद्य खुदरा कीमतों के प्रतिशत के रूप में सब्जियों के लिये मिलने वाला हिस्सा 23 से 28 प्रतिशत और ताजे फलों के लिये मिलने वाला हिस्सा 25 से 30 प्रतिशत रहा।

यदि हम उन देशों के अनुभवों की, जहां ये बड़ी बहुराष्ट्रीय खुदरा कंपनियां कार्यरत हैं की तुलना भारत से करें तो ध्यान में आता है कि 1950 में अमेरीकी किसानों को उपभोक्ता व्यय का 40 प्रतिशत प्राप्त होता था, जो घट कर अब मात्र 25 प्रतिशत से भी कम हो गया है।

अमरीकी किसानों को दूध की खुदरा कीमत का 45 प्रतिशत, अंडों का 41 प्रतिशत, मांस का 32 प्रतिशत ही मिलता है। भारत में (जहां छोटे दुकानदारों का

प्रादुर्भाव है), दूध की खुदरा कीमत 34 रूपये प्रति किलो (अमूल) में से 26 रूपये प्रति किलो (76.5 प्रतिशत) और चीनी की खुदरा कीमत 35 रूपये प्रति किलो में से 22 रूपये (63 प्रतिशत) किसानों को प्राप्त होता है।

यह सही है कि ढांचागत सुविधाओं (भंडारण और शीतगृहों) के अभाव में किसानों को सब्जियों और फलों के लिये अच्छी कीमतें नहीं मिल पाती, लेकिन मोटे तौर पर खुदरा का भारतीय मॉडल किसानों के लिये अमेरीकी मॉडल से कहीं ज्यादा लाभकारी है।

सरकार का यह तर्क है कि विदेशी खुदरा कंपनियों द्वारा किसानों से सीधी खरीद के चलते बिचौलियों और एजेंटों की जरूरत समाप्त हो जायेगी, जिसके चलते उपभोक्ता को लाभ होगा। इस बात की जब हम व्यवहारिकता के धरातल पर जांच करने का प्रयास करते हैं तो अंतर्राष्ट्रीय अनुभव बताता है कि अधिकांश खाद्य व्यापार में मात्र कुछ ही कंपनियों का दबदबा है। ये कंपनियां खाद्य पदार्थों की खरीद में एकाधिकार रखती हैं। इस एकाधिकार की यह स्थिति है कि यूरोप में 32 लाख किसानों से मात्र कुछ बड़ी कंपनियां ही खरीद करती हैं, जो 16 करोड़ उपभोक्ताओं को ये खाद्य पदार्थ बेचती हैं।

एकाधिकार का आलम यह है कि इंग्लैंड में मात्र 4 कंपनियां दो-तिहाई खाद्य पदार्थों की खरीद पर नियंत्रण

आज से एक दशक पूर्व जब गेहूं किसान से 6 रूपये किलो खरीदा जाता था, बाजार में आटे का भाव 7 से 8 रूपये किलो होता था। लेकिन आज इन कंपनियों द्वारा अनाज की भारी खरीद के चलते आटे का भाव 22 से 25 रूपये किलो पहुंच चुका है, जबकि किसान को अभी भी मात्र 12 से 13 रूपये किलो का भाव ही मिलता है।

रखती हैं, जबकि अमेरिका में 60 प्रतिशत खाद्य खरीद पर मात्र 5 कंपनियों का कब्जा है। भारत में भी जब से विदेशी और भारतीय कंपनियों द्वारा अनाज की खरीद होने लगी है, खुदरा कीमतों और किसान के खरीद कीमत के बीच अंतर बढ़ता ही जा रहा है।

आज से एक दशक पूर्व जब गेहूं किसान से 6 रूपये किलो खरीदा जाता था, बाजार में आटे का भाव 7 से 8 रूपये किलो होता था। लेकिन आज इन कंपनियों द्वारा अनाज की भारी खरीद के चलते आटे का भाव 22 से 25 रूपये किलो पहुंच चुका है, जबकि किसान को अभी भी मात्र 12 से 13 रूपये किलो का भाव ही मिलता है।

यदि सरकार यह दावा करती है कि खुदरा क्षेत्र में विदेशी कंपनियों के आने से देश में भंडारण और कोल्ड स्टोरेज की कमी दूर हो जायेगी तो यह भ्रामक होगा। सरकार द्वारा एक दशक से भी पहले भंडारण और कोल्ड स्टोरेज में विदेशी निवेश खोल दिया गया था, लेकिन इस क्षेत्र में कोई विदेशी निवेश प्राप्त नहीं हुआ। इसलिये अगर खुदरा क्षेत्र में आने वाली विदेशी कंपनियां भंडारण और कोल्ड स्टोरेज बनाती है तो यह अपने हित साधन के लिये और यही नहीं किसान और उपभोक्ता के शोषण के लिये ही बनाएगी।

भंडारण और कोल्ड स्टोरेज, किसान के उत्पाद को बचाने के लिये अत्यंत जरूरी है। देश की खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चत करने के लिये सरकार का यह दायित्व है कि वह भंडारण और कोल्ड स्टोरेज की समुचित व्यवस्था करे।

दुर्भाग्यपूर्ण है कि आजादी के 64 वर्ष बाद भी हमारी सरकार समुचित भंडारण की व्यवस्था उपलब्ध नहीं करवा पाई है और उसके लिये भी विदेशी निवेश पर निर्भरता दिखा रही है। योजना आयोग ने स्वयं माना है कि देश में भंडारण और कोल्ड स्टोरेज की व्यवस्था के लिये मात्र

7,687 करोड़ रूपये के निवेश की जरूरत है। केन्द्र सरकार के 12 लाख 57 हजार करोड़ रूपये के सालाना बजट के मद्देनजर यह इतनी बड़ी राशि नहीं है, जो जुटाई न जा सके और उसके लिये करोड़ों लोगों के रोजगार को दांव पर लगा दिया जाये।

अंतर्राष्ट्रीय अनुभव बताता है कि इन बहुराष्ट्रीय विशालकाय कंपनियों के चलते गुणवत्ता, और मानकों के नाम पर किसानों को भारी नुकसान पहुंचता है। संयुक्त राष्ट्र के खाद्य एवं कृषि संगठन के अनुसार गुणवत्ता, मानकों और इन कंपनियों की विपणन नीतियों के कारण किसानों को भारी नुकसान पहुंचता है।

अंतर्राष्ट्रीय अनुभव बताता है कि इन बहुराष्ट्रीय विशालकाय कंपनियों के चलते गुणवत्ता और मानकों के नाम पर किसानों को भारी नुकसान पहुंचता है। संयुक्त राष्ट्र के खाद्य एवं कृषि संगठन के अनुसार गुणवत्ता, मानकों और इन कंपनियों की विपणन नीतियों के कारण किसानों को भारी नुकसान पहुंचता है। इसलिये इन कंपनियों द्वारा भंडारण और शीतगृह बनाना देश के किसानों तथा उपभोक्ताओं के हित के लिये नहीं है। इन कंपनियों द्वारा गुणवत्ता के नाम पर जिस प्रकार से खाद्य पदार्थों को खारिज कर दिया जाता है, और उसे किसानों को नष्ट करना पड़ता है या पशुओं को चारे के रूप में खिलाना पड़ता है। छोटे दुकानदारों के मॉडल में यह सामान सस्ते दाम पर मानवीय उपभोग के लिये उपलब्ध हो जाता है।

भारत में कुपोषण और भुखमरी के ताजा हालातों के चलते देश में इस प्रकार से खाद्य पदार्थों की बरबादी किसी हालत में सही नहीं होगी। ❑

बीज में छिपी है खाद्य संप्रभुता

पूरी दुनिया में नया बीज कानून लाया जा रहा है, जिसमें बीजों का पंजीयन कराना अनिवार्य है। इस प्रकार छोटे किसान अपनी विविध प्रकार की फसलें नहीं उगा सकेंगे और जबरन उन्हें बड़े बीज निगमों पर निर्भर रहना होगा। ये बड़े निगम किसानों द्वारा विकसित मौसम के अनुकूल बीजों का भी पेटेंट करा रहे हैं। इस प्रकार किसानों के बीज और ज्ञान का उपयोग कर ये उन्हें लूट रहे हैं।

■ वंदना शिवा

यदि किसानों के पास अपना बीज न हो या मुक्त परागण किस्मों तक उनकी पहुंच न हो, जिसे वे सुरक्षित रख सकें या जिसका वे विनिमय कर सकें, तो उनके पास बीज संप्रभुता नहीं होगी। नतीजतन उनके पास खाद्य संप्रभुता भी नहीं होगी। गहराते कृषि एवं खाद्य संकट की जड़ें बीज आपूर्ति प्रणाली में हो रहे बदलाव और बीज विविधता व बीज संप्रभुता के क्षरण में निहित है। क्योंकि खाद्य शृंखला की पहली कड़ी बीज ही है।

बीज संप्रभुता से आशय किसानों के अधिकारों की सुरक्षा और विभिन्न प्रकार के बीज स्रोतों तक पहुंच बनाने के लिए बीज एवं उसकी प्रजातियों के विनिमय से है, जिन्हें उभरती हुई बड़ी बीज कंपनियों द्वारा पेटेंट कराने, स्वामित्व हासिल करने, नियंत्रित करने और आनुवांशिक रूप से परिष्कृत किए जाने से बचाया जा सकता है। यह बीज एवं जैव विविधता को सार्वजनिक वस्तु के रूप में उपयोग में लाने पर आधारित है।

पिछले 20 वर्षों में बीज विविधता और बीज संप्रभुता के मामले में बड़ी तेजी से क्षरण देखा गया है। अब बीजों पर कुछ बड़ी कंपनियों का नियंत्रण बढ़ गया है। 1995 में जब संयुक्त राष्ट्र ने लाइपजिंग में प्लांट जेनेटिक रिसोर्स कांफ्रेंस का आयोजन किया था, तो बताया गया था कि कृषि जैव विविधता का 75 प्रतिशत हिस्सा 'आधुनिक' किस्मों के इस्तेमाल के कारण लुप्त हो गया। उसके बाद से यह क्षरण तेजी से बढ़ा है।

विश्व व्यापार संगठन के व्यापार संबंधी बौद्धिक संपदा अधिकार समझौते ने आनुवांशिक रूप से तैयार बीजों के प्रसार में तेजी लाई है, जिसका पेटेंट कराया जा सकता है और रॉयल्टी वसूली जा सकती है। नवदान्या की शुरुआत गैट के व्यवसाय संबंधी बौद्धिक संपदा अधिकार समझौते के जवाब में की गई थी, जिसके बारे में बाद में मोनसेंटो के प्रतिनिधि ने कहा था कि इस समझौते का मसौदा तैयार करते वक्त इसके सर्वेसर्वा वह ही थे।

विश्व व्यापार संगठन के व्यापार संबंधी बौद्धिक संपदा अधिकार समझौते ने आनुवांशिक रूप से तैयार बीजों के प्रसार में तेजी लाई है, जिसका पेटेंट कराया जा सकता है और रॉयल्टी वसूली जा सकती है। नवदान्या की शुरुआत गैट के व्यवसाय संबंधी बौद्धिक संपदा अधिकार समझौते के जवाब में की गई थी....

निगम ने इसमें एक समस्या को

पारिभाषित किया कि किसान बीज को संजोकर रखते हैं। इसका हल उन्होंने यही सुझाया कि बीज के पेटेंट और बौद्धिक संपदा अधिकार के जरिये किसानों द्वारा बीज संजोकर रखने को अवैध घोषित कर दिया जाए। इसका नतीजा यह हुआ कि आनुवांशिक रूप से तैयार मक्का, सोया, राई, कपास आदि की खेती का क्षेत्रफल नाटकीय ढंग से बढ़ गया।

पेटेंट कराए गए आनुवांशिक रूप से तैयार बीज विविधता को खत्म और विस्थापित करने के अलावा बीज संप्रभुता को भी कम कर रहे हैं। पूरी दुनिया में नया बीज कानून लाया जा रहा है, जिसमें बीजों का पंजीयन कराना अनिवार्य है। इस प्रकार छोटे किसान अपनी विविध प्रकार की फसलें नहीं उगा सकेंगे और जबरन उन्हें बड़े बीज निगमों पर निर्भर रहना होगा। ये बड़े निगम किसानों द्वारा विकसित मौसम के अनुकूल बीजों का भी पेटेंट करा रहे हैं। इस प्रकार किसानों के बीज और ज्ञान का उपयोग कर वे उन्हें लूट रहे हैं।

बीज एवं बीज संप्रभुता के लिए दूसरा खतरा बीजों का आनुवांशिक सम्मिश्रण (प्रदूषण) भी है। जैसे ही किसानों की बीज आपूर्ति रोक दी जाती है और वे पेटेंट किए हुए बीजों पर निर्भर हो जाते हैं, तो उसका नतीजा यही होता है कि वे कर्जदार हो जाते हैं। कपास उत्पादन के लिए मशहूर भारत बीटी कपास बीज के कारण न केवल कपास बीजों की विविधता गंवा बैठा, बल्कि यहां कपास बीज की संप्रभुता भी खत्म हो गई। 95 प्रतिशत कपास बीज मोनसेंटो कंपनी का बीटी कपास है।

हर वर्ष किसानों को बीज खरीदने के लिए मजबूर करके उन्हें कर्ज के जाल

2004 से भारत भी एक बीज कानून लाना चाह रहा है, जिसमें किसानों को अपने बीज का पंजीयन कराना होगा। अगर यह कानून लागू हो गया, तो किसान स्वदेशी बीजों का उपयोग न करने को मजबूर हो जाएंगे। इसके खिलाफ बीज सत्याग्रह तक किया जा चुका है और प्रधानमंत्री को हजारों लोगों के हस्ताक्षर वाला ज्ञापन भी सौंपा गया है।

में फंसाया जाता है। रॉयल्टी भुगतान नहीं कर पाने के चलते किसान आत्महत्या को मजबूर होते हैं।

यहां तक कि जैव विविधता और बीज संप्रभुता के क्षरण ने व्यापक कृषि एवं खाद्य संकट को जन्म दिया है। बीज निगम सरकार पर दबाव डालता है कि वह सार्वजनिक बीज आपूर्ति को खत्म करने और उसके बदले अविश्वसनीय पेटेंट किए हुए बीजों को खरीदने के लिए सार्वजनिक धन का उपयोग करे, जिसे हर साल खरीदना होगा।

यूरोप में 1994 में पौधों की प्रजातियों को बचाने के लिए एक प्रस्ताव लाया गया था, जिसमें किसानों को बीज कंपनियों को अनिवार्य स्वैच्छिक योगदान देने के लिए कहा गया। यह अपने–आप में विरोधाभासी है, क्योंकि जो अनिवार्य होगा, वह स्वैच्छिक नहीं हो सकता।

अनिवार्य स्वैच्छिक योगदान यानी रॉयल्टी को इस आधार पर उचित ठहराया जाता है कि बीज कंपनियों को सतत शोध एवं आनुवांशिक संसाधनों को बढ़ाने के लिए शुल्क दिया जाना चाहिए। मोनसेंटो ने जैव विविधता और किसान समुदायों से आनुवांशिक संसाधनों की नकल की थी। ऐसा उसने गेहूं के मामले में किया था, जिस पर नवदान्या ने ग्रीनपीस के साथ जैव नकल का मुकदमा लड़ा था।

पिछले दिनों फोर्ब्स पत्रिका में एक लेख प्रकाशित हुआ था, जिसमें बताया गया था कि किस तरह कृषि व्यवसाय अमेरिका का अकेला ऐसा क्षेत्र है, जिसमें उसका सकारात्मक व्यापार संतुलन है।

अमेरिका इसीलिए जीएम फूड को बढ़ावा देता है, क्योंकि इसके जरिये उसे रॉयल्टी मिलती है। विश्व व्यापार संगठन में भारत के खिलाफ अमेरिका के पहले विवाद के दौरान भारत पर बीजों के पेटेंट की अनुमति के लिए दबाव डाला गया था।

इसलिए 2004 से भारत भी एक बीज कानून लाना चाह रहा है, जिसमें किसानों को अपने बीज का पंजीयन कराना होगा। अगर यह कानून लागू हो गया, तो किसान स्वदेशी बीजों का उपयोग न करने को मजबूर हो जाएंगे। इसके खिलाफ बीज सत्याग्रह तक किया जा चुका है और प्रधानमंत्री को हजारों लोगों के हस्ताक्षर वाला ज्ञापन भी सौंपा गया है।

भारत ने भी मोनसेंटो के साथ भारत–अमेरिकी ज्ञान पहल पर हस्ताक्षर किया है। राज्यों को भी मोनसेंटो के साथ समझौता करने के लिए दबाव डाला जा रहा है। इसका एक उदाहरण मोनसेंटो – राजस्थान समझौता है, जिसके तहत मोनसेंटो को आनुवांशिक संसाधनों पर बौद्धिक संपदा अधिकार और बीजों पर शोध करने का अधिकार मिल जाएगा। यह समझना पड़ेगा कि अमेरिकी पर मोनसेंटो का दबाव और फिर इन दोनों का दुनिया भर की सरकारों पर संयुक्त दबाव बीज खाद्य एवं लोकतंत्र के भविष्य के लिए एक बड़ा खतरा है। ❑